क्षेत्रीय मार्गदर्शिका

THE MENTORING PROJECT

स्वयं पर संदेह करना
कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

ROB KANE

स्वयं पर संदेह करना
कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

ROB KANE

(रॉब केन)

विषय-सूची

विषय-सूची 3

भाग I: संदेह की पहचान 7

भाग II: हमारे संदेह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया 13

भाग III: संदेह को विश्वास में बदलना.. 29

निष्कर्ष.. 35

परिचय

बहुत से लोगों के समान, बढ़ती हुई आयु के साथ-साथ मैं भी अधिक संदेह करने वाला हो गया हूँ। संदेह मेरे जीवन में आता-जाता रहता है, जो प्रतिदिन मेरे पास आकर मेरे मन में आने वाली लगभग हर बात को परखता और तौलता है। जैसे मौसम के पूर्वानुमान की सटीकता, किसी ऑनलाइन लेख के दावे, किसी राजनेता की प्रतिज्ञाएँ, किसी सहकर्मी की विश्वासयोग्यता, या किसी नए लोकप्रिय खाद्य पदार्थ के स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभ—ये सभी ऐसे प्रश्न हैं जो निरंतर मेरे मन में घूमते रहते हैं। लेकिन मुझे नहीं लगता कि यह केवल मेरी ही स्थिति है। हम सभी किसी न किसी रूप में संदेह से जूझते हैं, और कभी-कभी यह संघर्ष स्वयं पर संदेह करने का रूप ले लेता है, जब हम केवल परिस्थितियों पर ही नहीं, वरन् अपने स्वयं के निर्णय, अपने मूल्य, या अपनी योग्यताओं पर भी प्रश्न चिन्ह लगाने लगते हैं।

निष्पक्ष रूप से देखें तो हमारे बहुत-से संदेह उचित होते हैं। अधिकाँश वे संदेह जीवन के वर्षों के अनुभवों से उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, किसी फफूँदी लगे केले के स्वास्थ्य लाभों पर संदेह करना शायद अच्छी बात है। किसी झूठे शिक्षक की बातों पर प्रश्न उठाना विश्वासयोग्यता का कार्य है। किसी ठग की खराई पर संदेह करना विवेकपूर्ण व्यवहार है। हर प्रकार का संदेह बुरा नहीं होता है। जितनी बार हम समझते हैं, उससे कहीं अधिक बार संदेह बुद्धिमानी का एक रूप हो सकता है।

परन्तु मसीहियों की पहचान संदेह से नहीं होनी चाहिए। अन्तः हम विश्वास करने वाले लोग हैं—अर्थात् उस उद्धारकर्ता, राजा यीशु पर विश्वास करने वाले लोग हैं, जिसे क्रूस पर चढ़ाया गया, गाड़ा गया, फिर जीवित हुआ और स्वर्ग पर उठा लिया गया। लूका अपने सुसमाचार के आरम्भ में ही अपने लिखने का उद्देश्य स्पष्ट करता है: "कि तू यह जान ले, कि वे बातें जिनकी तूने शिक्षा पाई है, कैसी

अटल हैं" (लूका 1:4)। मसीही विश्वास का अर्थ यह नहीं है कि हम अनिश्चितता में निरन्तर भटकते रहें और यह न जानें कि परमेश्वर के साथ हमारा सम्बन्ध कैसा है। मसीही व्यक्ति मसीह के द्वारा पूरे किए गए कार्य के द्वारा परमेश्वर के साथ एक सुनिश्चित और स्थिर एकता का आनन्द लेता है। और यह सब हमें विश्वास के माध्यम से प्रदान किया जाता है।

अंततः परमेश्वर हमें इसलिए बुलाता है कि हम उसके स्वरूप और उसके पुत्र के द्वारा पूर्ण किए गए कार्य पर दृढ़ तथा अटल भरोसा रखते हुए विश्राम पाएँ। परमेश्वर पर भरोसा हमें कठिन परिस्थितियों में भी विश्राम करने के योग्य बनाता है, जबकि स्वयं पर संदेह और आत्मिक अनिश्चितता बेचैनी को उत्पन्न करती है। यहाँ स्वयं पर संदेह के अर्थ को समझना महत्वपूर्ण है—यह केवल परिस्थितियों पर प्रश्न उठाना नहीं है, वरन् अपनी पहचान, आश्वासन और योग्यता पर संदेह करना है। इस प्रकार का संदेह बहुत अधिक बोझिल हो सकता है, विशेषकर तब जब विश्वास दुर्बल प्रतीत होता है और हम यह सोचते हैं कि स्वयं पर संदेह करने पर कैसे विजय पाएँ।

परमेश्वर के कार्य पर संदेह करना पाप है। निःसंदेह, कुछ बातों पर संदेह करना बुद्धिमानी हो सकती है, परन्तु परमेश्वर जो सत्य कहता है उस पर संदेह करना मूर्खता है। परमेश्वर कहता है, "क्योंकि सन्देह करनेवाला समुद्र की लहर के समान है जो हवा से बहती और उछलती है" (याक. 1:6)। सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में हम संदेह के गहरे उदाहरण देखते हैं। ये उदाहरण विश्वासियों को लज्जित करने के लिए नहीं दिए गए हैं, परन्तु यह दिखाने के लिए हैं कि परमेश्वर के सेवक भी अनिश्चितताओं से संघर्ष करते थे, और उसी प्रक्रिया में वे उस पर और अधिक गहरा भरोसा करना सीखते थे।

तो फिर क्या होता है जब संदेह भीतर प्रवेश करने लगता है—किसी राजनेता, किसी पुराने फल या किसी समाचार शीर्षक के विषय में नहीं, परन्तु स्वयं परमेश्वर और उसके सत्य वचनों के विषय में है? जब आप स्वयं को उन बातों पर प्रश्न उठाते हुए पाते हैं जिन पर परमेश्वर चाहता है कि आप दृढ़ विश्वास रखें, तब आप क्या करते हैं? आप आत्मिक अनिश्चितता का सामना कैसे करते हैं, और स्वयं पर संदेह करने पर विजय पाना कैसे सीखते हैं?

यहीं से यह जीवन-कौशल मार्गदर्शिका आरम्भ होती है।

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

पहला भाग स्वयं संदेह करने पर प्रकाश डालता है—उसकी परिभाषा प्रस्तुत करते हुए, उसके स्रोतों को उजागर करते हुए, और पवित्रशास्त्र में उसके विभिन्न उदाहरणों का अध्ययन करते हुए।

दूसरा भाग हमारे संदेह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करता है। इसका उद्देश्य यह है कि हम परमेश्वर के धैर्य और दया को स्पष्ट रूप से देखें, और परिणामस्वरूप जब भी हमारे मन में प्रश्न उठें, तो हम उन्हें लेकर उसके पास जाने के लिए प्रेरित हों।

अन्त में, तीसरा भाग उन उपायों की खोज करता है जिन्हें परमेश्वर ने हमें संदेह से निकालकर अधिक दृढ़ विश्वास और गहरे आश्वासन की ओर ले जाने के लिए प्रदान किया है।

यदि परमेश्वर की इच्छा हुई, तो ये सभी भाग एक-दूसरे पर आधारित होते हुए ऐसे क्रम में आगे बढ़ेंगे कि जब संदेह का कोहरा हमारे ऊपर छा जाए, तब वे हमारे लिए आगे बढ़ने का एक स्पष्ट मार्ग प्रस्तुत करेंगे।

1

संदेह की पहचान

संदेह की परिभाषा

सरल शब्दों में कहें तो, संदेह को "आत्मविश्वास की कमी" के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

अंग्रेज़ी शब्द "confidence" (आत्मविश्वास) लैटिन भाषा के "कॉन" (अर्थात् "के साथ") और "फिदेरे" (अर्थात् "भरोसा करना") से मिलकर बना है। किसी बात पर संदेह करने का अर्थ उस पर भरोसा न करना या उसमें विश्वास की कमी होने से है। जब यह अनिश्चितता व्यक्तिगत रूप ले लेती है, तब बहुत से मसीही लोग, विशेषकर आत्मिक संघर्ष के समय स्वयं पर संदेह करने के क्षणों का अनुभव करते हैं।

संदेह करने के अनेक कारण हो सकते हैं, परन्तु व्यापक रूप से इन कारणों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

1. बौद्धिक संदेह
2. भावनात्मक संदेह
3. जानबूझकर किया गया संदेह

बौद्धिक संदेह किसी दावे की सच्चाई पर प्रश्न उठाता है। संदेश पहुँचाने वाला व्यक्ति विश्वासयोग्य हो सकता है, फिर भी दावा अविश्वसनीय प्रतीत होता है क्योंकि उपलब्ध तथ्य किसी अन्य निष्कर्ष की ओर संकेत करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई मित्र गर्मियों के मौसम में कहे, कि "गरम कपड़े पहन लेना क्योंकि कल बर्फ़बारी होने वाली है!", तो स्वाभाविक रूप से बौद्धिक संदेह उत्पन्न होगा। या यदि परिवार का एक सदस्य कहे कि पारिवारिक मुलाकात अगले शनिवार को है, जबकि कई अन्य सदस्य यह पुष्टि करेंगे कि वह मुलाकात तो उसके भी बाद आने वाले शनिवार को है, तो तर्क स्वाभाविक रूप से प्रश्न उठाएगा। जब कोई दावा उपलब्ध तथ्यों से मेल नहीं खाता, तब बौद्धिक संदेह उत्पन्न होता है। इसी कारण कभी-कभी मसीही लोग संदेह के विषय में पवित्रशास्त्र की ऐसी आयतों

की ओर देखते हैं जो उन्हें स्पष्टता प्रदान करती है। उदाहरण के लिए, याकूब 1:6 चेतावनी देता है "क्योंकि सन्देह करनेवाला समुद्र की लहर के समान है जो हवा से बहती और उछलती है।" ऐसी आयतें उस समय मार्गदर्शन और स्पष्टता प्रदान करती हैं जब तथ्य हमें अस्पष्ट या उलझे हुए दिखाई देते हैं।

भावनात्मक संदेह हृदय की गहराई से जुड़ा हुआ होता है और प्रायःसम्बन्धों में मिले पीड़ादायक अनुभवों से उत्पन्न होता है। जब कोई अत्याचारी पति न जाने कितनी बार यह वादा करे कि वह सुधर जाएगा; जब कैंसर फिर लौट आए और रोगी आगे की कीमोथेरेपी के प्रभाव पर संदेह करने लगे; या जब कोई अविश्वसनीय मित्र यह प्रतिज्ञा करे कि वह बदल जाएगा—तब भावनात्मक संदेह उत्पन्न होता है। अतीत की पीड़ा भविष्य के संदेह को जन्म देती है। भावनात्मक संदेह प्रायः प्रमाणों की कमी से नहीं, वरन् स्वयं को बचाने की प्रवृत्ति से उत्पन्न होता है। भावनात्मक घाव स्वयं पर संदेह को भी बढ़ा सकता है, जिससे लोगों पर भरोसा करना या किसी सकारात्मक परिणाम की आशा करना कठिन हो जाता है।

जानबूझकर किया गया संदेह हमारी पूर्व धारणाओं और इच्छाओं से प्रेरित होता है। हमारी पूर्वधारणाएँ और व्यक्तिगत पसन्द एक ऐसे दृष्टिकोण के समान कार्य करता है, जिनके माध्यम से हम जानकारी की व्याख्या करते हैं। जब रेफरी हमारे समूह के विरुद्ध निर्णय देता है, तो हम स्वाभाविक रूप से उस निर्णय पर संदेह करने लगते हैं। हम नहीं चाहते कि वह बात सत्य हो, इसलिए हम उसके प्रति संदेह करने लगते हैं और उसे स्वीकार करने से इनकार करने की प्रवृत्ति रखते हैं। यही जानबूझकर किया गया संदेह होता है। कई मसीहियों के लिए चुनौती केवल बौद्धिक स्पष्टता प्राप्त करने की नहीं होती, परन्तु यह सीखने की भी होती है कि जब उनकी व्यक्तिगत इच्छाएँ परमेश्वर की बातों से टकराती हैं, तब वे स्वयं पर संदेह करना कैसे छोड़ें। जानबूझकर किया गया संदेह हमें स्मरण दिलाता है कि अपनी पसंद और इच्छाओं को परमेश्वर की इच्छा के अधीन करना शिष्यत्व का एक महत्वपूर्ण भाग है।

जब संदेह उत्पन्न हो, तो सबसे पहले उसके मूल कारण को पहचानने का प्रयास करें। क्या वह बौद्धिक है, जहाँ तथ्य समझ में नहीं आ रहे हैं? क्या वह भावनात्मक है—जहाँ भावनाएँ प्रमाणों पर प्रभावी हो जाती हैं? या फिर वह स्वेच्छापूर्ण है, जो पूर्व धारणाओं और इच्छाओं से प्र भावित होता है? अधिकाँश ये तीनों प्रकार एक-दूसरे से जुड़े हुए होते हैं; परन्तु यह सामान्य बात है। आपका कार्य यह पहचानना है कि इनमें से कौन सा प्रकार सबसे अधिक प्रभाव डाल रहा है। पवित्रशास्त्र हमें बुद्धि देता है, और विश्वासी संदेह से संबंधित पवित्रशास्त्र के वचनों की ओर देखकर यह स्मरण कर सकते हैं कि परमेश्वर हमारी अनिश्चितताओं के बीच भी धीरज के साथ हमारे साथ बना रहता है और हमारी सहायता करता है।

शुभ सन्देश यह है कि संदेह के ये तीनों प्रकार पवित्रशास्त्र में दिखाई देते हैं। इससे पता चलता है कि हमारे प्रश्नों का स्रोत चाहे जो भी हो, परमेश्वर उनसे आश्चर्यचकित नहीं होता है। अगले भाग में हम बाइबल के कुछ उदाहरणों पर विचार करेंगे और जानेंगे कि वे हमें इस विषय में क्या सिखाते हैं कि परमेश्वर के लोग—और स्वयं परमेश्वर—हमारे संदेह के प्रति कैसी प्रतिक्रिया करते हैं। बाइबल तथा संदेह का सम्बन्ध उतना ही गहरा है, जितना बहुत से मसीही लोग समझते भी नहीं हैं।

बाइबल आधारित उदाहरण

संदेह के सबसे प्रसिद्ध उदाहरणों में से एक यीशु के अपने ही शिष्यों में से एक से मिलता है। थोमा का संकोच इतना प्रसिद्ध हो गया कि इतिहास में वह "संदेही थोमा" के नाम से जाना जाने लगा। यह निश्चित रूप से ऐसी विरासत नहीं है, जिसकी आशा हममें से अधिकाँश लोग करेंगे।

यीशु के मृतकों में से जी उठने के बाद, वह अपने शिष्यों को दिखाई दिया। परन्तु उस समय थोमा वहाँ उपस्थित नहीं था। जब अन्य शिष्यों ने उसे बताया कि यीशु सचमुच जीवित है, तो थोमा ने उनकी गवाही को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उसने कहा, "जब तक मैं उसके हाथों में कीलों के छेद न देख लूँ, और कीलों के छेदों में अपनी उँगली न डाल लूँ, तब तक मैं विश्वास नहीं करूँगा" (यूहन्ना 20:25)।

उस समय थोमा बौद्धिक संदेह से जूझ रहा था। उसने कभी किसी मनुष्य को मरे हुओं में से जी उठते हुए नहीं देखा था। उसकी समझ के अनुसार उपलब्ध तथ्य इस दावे का समर्थन नहीं करते थे। वह विश्वास करने के विरोध में नहीं था; उसे केवल और अधिक प्रमाणों की आवश्यकता थी। संभव है कि आपका संदेह भी इसी प्रकार का हो। आप सत्य का विरोध नहीं कर रहे हैं; परन्तु आप केवल अतिरिक्त पुष्टि के बिना आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं। अतः अपने संदेह को ईमानदारी से पहचानना, स्वयं पर संदेह करना छोड़ना और परमेश्वर पर और अधिक पूरी रीति से भरोसा करना सीखने की दिशा में यह पहला कदम है।

एक वित्तीय उदाहरण पर विचार कीजिए। हो सकता है कि आप नया घर खरीदने के विचार के विरोध में न हों, परन्तु आपको अपने बैंक खाते की स्थिति का पता है। आँकड़े फिलहाल इस संभावना का समर्थन नहीं करते। आपके सामने उपलब्ध जानकारी स्वाभाविक रूप से बौद्धिक संदेह उत्पन्न करती है।

हो सकता है कि आपका संघर्ष भिन्न प्रकार का हो। शायद आपकी बाधा बौद्धिक नहीं, परन्तु अनुभवों से उत्पन्न हुई हो। घर खरीदने वाले उसी उदाहरण पर लौटें—कल्पना कीजिए कि आप वर्षों से नया घर लेना चाहते हैं, लेकिन हर बार किसी न किसी कारण से बात बनते-बनते बिगड़ जाती है। जब भी आपने इस दिशा में कदम बढ़ाया, कुछ न कुछ गलत हो गया। इसलिए जब आपके लिए उपयुक्त घर उपलब्ध होता है, तो आप हिचकिचाते हैं। ऐसा इसलिए नहीं कि तथ्य अस्पष्ट हैं, परन्तु इसलिए कि बार-बार की निराशाओं ने आपके मन को ठेस पहुँचाई है। यही भावनात्मक संदेह होता है। बीते हुए दुःख मानो फुसफुसाकर कह रहे हों कि, कि "फिर से ठेस लगने का जोखिम मत उठाओ।" आप नीतिवचन 13:12 की इस सच्चाई को भली-भाँति जानते हैं: "जब आशा पूरी होने में विलम्ब होता है, तो मन निराश होता है...।" एक बार फिर से आशा करके निराश होने की अपेक्षा, निराशा से बचना अधिक सुरक्षित होता है।

भजन संहिता 22 हमें भावनात्मक संदेह की बाइबल आधारित झलक प्रदान करता है। दाऊद निरन्तर परमेश्वर को पुकारता रहता है, फिर भी उसे कोई उत्तर नहीं मिलता। थका हुआ और निराश होकर वह यह संदेह करने लगता है कि कहीं परमेश्वर उसकी सुन ही न रहा हो:

"हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड़ दिया? तू मेरी पुकार से और मेरी सहायता करने से क्यों दूर रहता है? मेरा उद्धार कहाँ है? हे मेरे परमेश्वर, मैं दिन को पुकारता हूँ परन्तु तू उत्तर नहीं देता; और रात को भी मैं चुप नहीं रहता" (भज. 22:1-2)।

चुप रहने का भावनात्मक बोझ अत्यन्त भारी और कुचल देने वाला होता है। दाऊद तथ्यों पर संदेह नहीं कर रहा था—वह परमेश्वर की निकटता, उसकी चिन्ता और उसके कार्य करने की इच्छा पर संदेह कर रहा था। उस घर खरीदने वाले व्यक्ति के समान जो बार-बार की निराशाओं से भली-भाँति परिचित हो चुका है, दाऊद के लिए यह विश्वास करना कठिन हो रहा था कि उसे कभी छुटकारा मिलेगा या नहीं। यहाँ भी बाइबल तथा संदेह हमें दिखाते हैं कि परमेश्वर सच्चे प्रश्नों का स्वागत करता है; वह उनसे भागने या उन्हें मन में दबाए रखने की अपेक्षा नहीं करता है।

फिर भी, सम्भव है कि आपका संदेह न तो बौद्धिक हो और न ही भावनात्मक हो। सम्भव है कि यह जानबूझकर किया गया संदेह हो।

इस बार आपका संदेह आपके बैंक खाते की स्थिति की समझ (बौद्धिक संदेह) या पिछले अनुभवों की पीड़ा (भावनात्मक संदेह) पर आधारित नहीं है। इस बार आपको इस बात पर संदेह है कि क्या आप घर खरीद पाएँगे, क्योंकि आप वास्तव में घर खरीदना ही नहीं चाहते। आपकी इच्छा घर के स्वामी के अनुकूल नहीं है, इसलिए आप जानबूझकर इस बात पर संदेह करते हैं कि आप कभी घर के स्वामी बनेंगे।

जानबूझकर किए गए संदेह का एक बाइबल आधारित उदाहरण मरकुस 10:17–22 में धनी युवक के वर्णन में मिलता है। जब यीशु उसे समझाता है कि अनन्त जीवन का अधिकारी बनने के लिए परमेश्वर की व्यवस्था का पालन करना आवश्यक है, तो वह युवक साहस पूर्वक दावा करता है कि वह इन सब बातों का पालन बचपन से करते आया है। परन्तु यीशु, जो उसकी वास्तविक स्थिति को जानता था, उसके हृदय की मूर्तिपूजा को प्रकट कर देता है। वह उससे कहता है कि वह अपनी सम्पत्ति का त्याग करे और उसके पीछे हो ले। आज्ञा का पालन करने के बजाय, हमें बताया गया है कि वह "इस बात से उदास होकर चला गया, क्योंकि वह बहुत धनवान था" (मरकुस 10:22)।

मसीह और अपनी सम्पत्ति के बीच चुनाव प्रस्तुत किए जाने पर उसने अपनी सम्पत्ति को चुन लिया। उसका संदेह तर्क या किसी दर्दनाक अनुभव पर आधारित नहीं था। उसकी इच्छाओं ने उस पर प्रभुत्व कर लिया था। जानबूझकर किया गया संदेह कहता है, कि *"मैं नहीं चाहता कि यह बात सत्य हो, इसलिए मैं इसे स्वीकार नहीं करूँगा।"*

इनमें से प्रत्येक उदाहरण हमें एक महत्वपूर्ण बात सिखाता है: पवित्रशास्त्र यह स्वीकार करता है कि संदेह विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न हो सकता है। जब हम यह पहचान लेते हैं कि हम किस प्रकार के संदेह का अनुभव कर रहे हैं—बौद्धिक, भावनात्मक, या जानबूझकर किया गया संदेह—तब हम अपने हृदय की जाँच करने, और अधिक विशेष ढँग से प्रार्थना करने, तथा अपने संदेहों का बुद्धिमानी से सामना करने के लिए उत्तम रीति से तैयार हो जाते हैं।

उद्देश्य यह नहीं है कि हम यह दिखावा करें कि संदेह अस्तित्व में ही नहीं है, परन्तु उसके मूल कारण तक पहुँचें, ताकि हम उसे सच्चाई से उस परमेश्वर के सामने ला सकें जो हमारे प्रश्नों का स्वागत करता है और हमारे हृदयों को बदल देता है। संदेह से सम्बन्धित पवित्रशास्त्र के वचनों पर ध्यान देने से विश्वासियों को अनिश्चितता के समय स्पष्टता, सांत्वना और सही दिशा मिलती है, तथा यह उन्हें

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं पर आधारित भरोसे के साथ-साथ स्वयं पर संदेह करने से आगे बढ़ने में सहायता करता है।

चिन्तन के लिए प्रश्न:

1. संदेह के साथ आपका अनुभव कैसा रहा है? आप सबसे अधिक किस बात पर अधिक संदेह करते हैं? क्या आपने कभी परमेश्वर पर संदेह किया है?
2. संदेह के इन तीन प्रकारों में से किसके साथ आपका संघर्ष सबसे अधिक है?
3. अतीत में, आपने संदेहों का सामना कैसे किया है?

2

हमारे संदेह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया

हमारे संदेह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया पर विचार करने से पहले, मैं दो मूलभूत सत्यों पर प्रकाश डालना चाहता हूँ:

1. परमेश्वर का मार्ग हमारे मार्ग जैसा नहीं है।
2. गलत धारणाएँ संदेह उत्पन्न करती हैं।

परमेश्वर का मार्ग हमारे मार्ग के जैसा नहीं है।

उसका मार्गदर्शन करने के लिए मैंने एक लेखन-पैड पर आठ पृष्ठों का हस्तलिखित पत्र तैयार करने में कई घंटे लगाए। उसमें मैंने पूरी सच्चाई से वही सलाह दी, जिसे मैं उसके और उसके परिवार के भले के लिए उचित समझता था। मैंने यह आशा करते हुए वह पत्र उसे भेजा कि वह मेरी बातों पर ध्यान देगा और उन्हें मानेगा।

आने वाले दिनों में ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे प्रयास सफल हो गए हैं। उसने सहमति व्यक्त कर दी, और मैं उसके जीवन में एक नए तथा अधिक स्वस्थ अध्याय की संभावना से आनन्दित हुआ—एक ऐसी आशीष जो उसके पूरे परिवार के लिए दीर्घकालिक लाभ का कारण बनती। कम-से-कम मुझे तो यही लगा था।

फिर भी, जब निर्णय लेने का समय आया, तो उसने विपरीत मार्ग चुन लिया। यद्यपि वह कुछ हद तक मेरी सलाह से सहमत दिखाई दे रहा था, परन्तु अन्ततः उसने मेरी सलाह पर भरोसा नहीं किया।

मुझे ठेस पहुँची।

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

हमारी पिछली सभी बातचीत, उस पत्र को लिखने में किया गया परिश्रम, उसका प्रत्येक शब्द—सब कुछ उसे समझाने में असफल सिद्ध हुआ। अपने शारीरिक स्वभाव के अधीन क्षणों में मेरे भीतर निराशा, खीझ और उलझन उमड़ पड़ी। किन्तु अनुग्रह के क्षणों में मैंने विश्वास किया कि उसने अपने परिवार के लिए बुद्धिमानी के साथ निर्णय लिया होगा, और यह भी कि परमेश्वर की सार्वभौमिक योजनाएँ मेरी अपनी समझ और इच्छाओं से कहीं बढ़कर हैं।

यह अनुभव उस मुख्य कारण को प्रकट करता है जिसके कारण हम अपने संदेहों को परमेश्वर के सामने लाने में हिचकिचाते हैं: हमें भय होता है कि वह भी मेरे ही समान प्रतिक्रिया करेगा—अर्थात् अपने वचन के प्रति हमारे संदेह के कारण वह आहत, खिन्न या अत्यन्त अप्रसन्न हो जाएगा। अंततः यदि एक अपूर्ण मनुष्य की सलाह अस्वीकार किए जाने पर उसे ठेस पहुँच सकती है, तो हमारे अविश्वास से सिद्ध परमेश्वर को कितनी अधिक पीड़ा होती होगी? इस प्रकार की सोच प्रायः स्वयं पर संदेह, भय और संदेह, तथा इस बात पर भरोसा करने की अनिच्छा से जुड़ी हुई होती है कि परमेश्वर सच्चे प्रश्नों का स्वागत करता है।

परन्तु इस प्रकार का तर्क एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भेद को अनदेखा कर देता है।

यद्यपि हम परमेश्वर के स्वरूप में रचे गए हैं, फिर भी हम परमेश्वर नहीं हैं। वह यशायाह 55:8 में कहता है: *"मेरे विचार और तुम्हारे विचार एक समान नहीं है, न ही तुम्हारे मार्ग और मेरे मार्ग एक जैसे हैं।"*

- जब हमारी सलाह को ठुकरा दिया जाता है, तो हमारे मन में क्रोध या मनमुटाव के विचार उत्पन्न होने लगते हैं। परन्तु परमेश्वर के विचार हमारे विचारों के समान नहीं हैं।
- जब हमारे प्रयास निष्फल प्रतीत होते हैं, तो हम उस कार्य को छोड़ देने का विचार कर सकते हैं। परन्तु परमेश्वर के मार्ग हमारे मार्ग जैसे नहीं हैं।

इसी कारण उसके मार्ग हमारे मार्गों से कहीं ऊँचे और श्रेष्ठ हैं, प्रेरित पौलुस फिलिप्पियों को यह आश्वासन देता है: *"मुझे इस बात का भरोसा है कि जिसने तुम में अच्छा काम आरम्भ किया है, वही उसे यीशु मसीह के दिन तक पूरा करेगा"* (फ़िलि. 1:6)। यदि परमेश्वर के मार्ग हमारे मार्ग जैसे होते, तो ऐसी कोई निश्चितता संभव नहीं होती। जैसे कि संभवतः

- डगमगाते हुए विश्वासियों में रुचि खो देता।
- बार-बार की असफलताओं से खीझ उठता।
- "अधिक आशाजनक" लोगों की ओर अपने संसाधनों को मोड़ देता।

- हमारे पापों को अनन्तकाल तक हमारे विरुद्ध पकडे रहता।
- उसकी धैर्य-सीमा समाप्त हो जाती।
- हमारे पाप जिस न्याय के योग्य हैं, उसे हमारे ऊपर लागू कर देता।

यह हमारे ही आचरण को दर्शाता है। फिर भी परमेश्वर इसके विपरीत घोषणा करता है: कि वह स्वयं को हमारे अनुसार नहीं ढालता। उसके मार्ग अनन्त रूप से अधिक ऊँचे हैं। इसलिए, जब हम परमेश्वर पर संदेह करते हैं, तो हमें यह सावधानी रखनी चाहिए कि हम मानवीय दुर्बलताओं को उस प र थोपने से बचें। गलत धारणाएँ अधिकतर विश्वास और संदेह दोनों को बढ़ा देते हैं, जिससे हमें यह समझ नहीं आता कि हम वास्तव में कहाँ खड़े हैं, जबकि संदेह पर बाइबल के वचन बार -बार यह दिखाते हैं कि परमेश्वर धीरज के साथ सुनता है और उन लोगों के निकट रहता है जो संघर्ष कर रहे होते हैं।

जब मसीही लोग स्वयं पर संदेह करने में विजय पाना सीखते हैं, तो इस यात्रा का एक भाग यह स्मरण करना है कि परमेश्वर अपनी सन्तानों को सच्चे प्रश्न पूछने पर कभी डाँटता नहीं है। पवित्रशास्त्र की ओर लौटना हमारे हृदयों को उसके स्वभाव के अनुरूप करता है और उस आन्तरिक भ य को शान्त करता है जैसे कि हमारे संदेह हमें अयोग्य ठहरा देते हैं।

गलत धारणाएँ संदेह को बढ़ाती हैं

एक पास्टर होने के नाते मुझे विभिन्न प्रकार की आलोचनाओं का सामना करना पड़ता है। कभी तो सुसमाचार सन्देश भी प्रभावहीन रह जाता है, कभी सलाह अस्वीकार कर दी जाती है, कभी कोई ब्लॉग-लेख गलत समझ लिया जाता है, कभी हमारी सेवकाई बजट पर प्रश्न उठते हैं, तो कभी संक्षिप्त सूचना के अक्षर का आकार बहुत छोटा बताया जाता है—किसी भी सप्ताह को लें लें तो, कुछ न कुछ आलोचना के दायरे में आ ही जाता है। कई वर्ष पहले एक मार्गदर्शक ने मुझसे कहा था कि "यदि आप आलोचना सहन नहीं कर सकते हैं, तो आप पास्टर के पद के योग्य नहीं हैं।" वे बिल्कुल सही थे। समय के साथ, अब मैं आलोचनाओं को बड़ी आसानी से झेल लेता हूँ। अब अधिकतर तीखी बातें या आलोचनाएँ मुझ पर प्रभावी नहीं होती हैं।

परन्तु एक प्रकार की आलोचना अब भी ठेस पहुँचाती है: वह जो गलत धारणाओं पर आधारित होती है।

किसी व्यक्ति को गलत रूप में प्रस्तुत करना ऐसा है मानो उसकी अनुमति के बिना उसका प्रवक्ता बन जाना और फिर उसकी बातों को गलत ढँग से प्रस्तुत करना। कोई दूसरा व्यक्ति मेरी मंशाओं को अपने अनुसार परिभाषित कर देता है, मेरे शब्दों के अर्थ को तोड़ -मरोड़ देता है, या ऐसे विश्वास मेरे नाम के साथ जोड़ देता है जिन्हें मैंने कभी माना ही नहीं। मैं अपनी बात रखने में असमर्थ रह जाता

हूँ, क्योंकि मेरे नाम का एक विकृत और काल्पनिक चित्र सार्वजनिक रूप से ध्वस्त किया जाता है। यह इसलिए गहरी ठेस पहुँचाता है क्योंकि यह व्यक्तिगत भी होता है और झूठा भी होता है।

अब मेरे साथ विचार कीजिए। जब हम परमेश्वर के विषय में झूठी बातों पर विश्वास करते हैं, तब हम भी उसके साथ यही करते हैं। हम उसके विरुद्ध झूठी गवाही देते हैं (निर्ग. 20:16)। हम एक ऐसे परमेश्वर की कल्पना गढ़ लेते हैं जो सिद्ध नहीं है और उसे ही यहोवा कहने लगते हैं । ऐसा परमेश्वर, जो पवित्रशास्त्र में बताए गए परमेश्वर से कम अनुग्रहकारी, कम धीरजवन्त, कम प्रभुत्व-संपन्न या कम प्रेम करनेवाला हो, यह एक ऐसा गलत चित्रण है जो संदेह को दूर करने के बजाय उसे और बढ़ा देता है।

जब हम यह मानकर चलते हैं कि परमेश्वर सिद्ध नहीं है, तब हम उसका गलत चित्रण करते हैं। यह विशेष रूप से गंभीर बात है, क्योंकि वही हमारे संदेह का समाधान है। कल्पना कीजिए कि एक चिकित्सक किसी रोगी को संतुलित आहार और नियमित व्यायाम करने की सलाह दे, लेकिन वह रोगी अपने परिवार से कहता है कि, "चिकित्सक ने तो कहा है कि खूब मिठाइयाँ खाओ और घंटों बैठकर टीवी देखो।" ऐसा गलत चित्रण समस्या को दूर नहीं करेगा, परन्तु और अधिक बढ़ा देगा। इसी प्रकार, जब हम अपनी मानवीय संकीर्णता को परमेश्वर पर थोपते हैं—और यह मान लेते हैं कि वह हमारे प्रश्न पूछने से दुखी होता है—तब हम उसी सम्बन्ध को क्षति पहुँचाते हैं जो हमारे संदेह का समाधान करने के लिए होता है।

यही कारण है कि हमारे विश्वास की आधारशिला पवित्रशास्त्र है, न कि हमारी धारणाएँ, भावनाएँ या कल्पनाएँ। जब भय और संदेह हमारे सोचने के तरीके को आकार देने लगते हैं, तब केवल परमेश्वर का नया और सही चित्र ही उस बिगड़े हुए रूप को दूर कर सकता है। संदेह से संबंधित पवित्र शास्त्र की शिक्षाओं और आयतों की ओर बार-बार लौटना हमें स्पष्टता प्रदान करता है, क्योंकि वे दिखाती हैं कि परमेश्वर निकट है, धीरजवन्त है, और हमारे प्रश्नों का सामना करने के लिए पर्याप्त सामर्थी है। पवित्रशास्त्र संदेह को दबाता नहीं है; वरन् उसे ऐसे परमेश्वर की ओर मोड़ देता है जो सच्चाई का स्वागत करता है और हृदय को परिवर्तित करता है।

इस प्रकार आत्मविश्वास में बढ़ते जाना स्वयं पर संदेह करने पर विजय पाने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कदम है, जो चिन्ताजनक अनिश्चितता को हटाकर परमेश्वर के स्वभाव पर दृढ़ भरोसा स्थापित करता है।

भजन संहिता

यह एक चौंका देने वाला तथ्य है: 150 भजनों में से एक -तिहाई से भी अधिक विलाप के भजन हैं। ये कोई साधारण सुझाव या औपचारिक प्रार्थनाएँ नहीं हैं, परन्तु ऐसे विश्वासियों की हृदय -विदारक पुकारें हैं जो विश्वास डगमगाने की कगार पर खड़े हैं।

आइए, मेरे साथ ऐसे कुछ उदाहरणों पर विचार करें:

भजन संहिता 10:1
"हे यहोवा तू क्यों दूर खड़ा रहता है? संकट के समय में क्यों छिपा रहता है?"

भजन संहिता 13:1

"हे परमेश्वर, तू कब तक? क्या सदैव मुझे भूला रहेगा?"

भजन संहिता 22:1

"तूने मुझे क्यों छोड़ दिया?"

भजन संहिता 42:3

"मेरे आँसू दिन और रात मेरा आहार हुए हैं; और लोग दिन भर मुझसे कहते रहते हैं, तेरा परमेश्वर कहाँ है?"

भजन संहिता 42:9

"तू मुझे क्यों भूल गया?"

भजन संहिता 44:23-24

हे प्रभु, जाग! तू क्यों सोता है? उठ! हमको सदा के लिये त्याग न दे! तू क्यों अपना मुँह छिपा लेता है? और हमारा दुःख और सताया जाना भूल जाता है?

भजन संहिता 74:1

"हे परमेश्वर, तूने हमें क्यों सदा के लिये छोड़ दिया है?"

भजन संहिता 74:11

"तू अपना दाहिना हाथ क्यों रोके रहता है?"

भजन संहिता 77:9

"क्या परमेश्वर अनुग्रह करना भूल गया?"

भजन संहिता 88:14

"हे यहोवा, तू मुझ को क्यों छोड़ता है? तू अपना मुख मुझसे क्यों छिपाता रहता है?"

ऐसे और भी बहुत से उदाहरण दिए जा सकते हैं, परन्तु मुख्य बात यह है: कि ये कोई अत्यधिक उत्साह से भरी हुई, सजी-सँवरी और वास्तविक संघर्षों को छिपाने वाली प्रार्थनाएँ नहीं हैं। ये उन लोगों के लिए पवित्र आत्मा से प्रेरित वचन हैं, जो अपने संदेहों के बीच में भी परमेश्वर को दृढ़ता से थामे रहते हैं।

उनकी परिस्थितियाँ अत्यन्त पीड़ादायक थीं। वे स्वयं को अकेला, त्यागा हुआ, दोषी ठहराया गया, तिरस्कृत, उलझन में पड़ा हुआ, भुला दिया गया और निराश महसूस करते थे। उन्हें उत्तर उतनी शीघ्रता से नहीं मिले जितनी उन्हें आशा थी। उनके मन में संदेहों का तूफान उमड़ता रहता था।

फिर भी ध्यान दीजिए कि उन्होंने क्या किया। वे सीधे परमेश्वर के सिंहासन के सामने गए और अपने मन का सारा बोझ उँडेल दिया। उन्होंने अपनी सारी चिन्ताएँ परमेश्वर पर डाल दीं (1 पतरस 5:7)।

फिर से।

एक बार फिर से।

एक बार फिर से।

ध्यान दीजिए कि ऐसा कभी नहीं होता कि परमेश्वर उनकी सच्ची बातों के लिए उन्हें डाँटता है। वह कभी आह भरकर यह नहीं कहता कि, "अरे फिर से वही बात!" वह कभी उन्हें धमकी नहीं देता कि उनके स्थान पर अधिक आज्ञाकारी आराधना करने वालों को ले आएगा। इसके विपरीत, वह उनकी शिकायतों को पवित्रशास्त्र का भाग बनाकर सुरक्षित रखता है, ताकि उनके बाद आने वाले और उनके समान संघर्ष करने वाले सभी विश्वासियों का सदा के लिए भला हो। ऐसा क्यों? क्योंकि एक विश्वासयोग्य परमेश्वर के चरणों में, सच्चाई के साथ व्यक्त किया गया संदेह विद्रोह नहीं है—परन्तु एक सम्बन्ध है।

मुझे अपने बच्चों के साथ बातचीत करना बहुत पसन्द है। वे परमेश्वर के सबसे बड़े वरदानों में से एक हैं, और मैं उनके प्रति अपने प्रेम और स्नेह की गहराई को शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता हूँ। जब उनके मन में जीवन से जुड़े हुए प्रश्न उठते हैं—जैसा कि अधिकाँश होता ही है—तो मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती है कि वे उन प्रश्नों को लेकर मेरे पास आते हैं। और मैं ऐसा चाहता भी हूँ! उनके आसपास के संसार को समझने में उनकी सहायता करना मेरे लिए आनन्द का विषय होता है।

यह स्वीकार करने में मुझे कोई संकोच नहीं कि मेरे उत्तर हमेशा सही नहीं होते हैं। मैं एक अत्यन्त त्रुटिपूर्ण पिता हूँ। मेरा धैर्य शीघ्र समाप्त हो जाता है। मेरी व्याख्याएँ भी कई बार आधी-अधूरी पड़ जाती हैं। फिर भी, जब मेरे बच्चे अपनी उलझनों, परेशानियों और बिखरी हुई परिस्थितियों को लेकर मेरे पास आते हैं, तो मुझे प्रसन्नता होती है।

अधिकाँश ऐसा होता है कि मेरे उत्तरों के बाद उनके मन में और भी प्रश्न उठते हैं। कभी-कभी उन प्रश्नों में संदेह की झलक भी होती है। परन्तु मुझे इससे कोई आपत्ति नहीं है। वास्तव में, यदि वे इन बातों को मेरे सामने रखने में असहज महसूस करें—यदि उन्हें लगे कि इन्हें किसी और के पास ले जाना अधिक सुरक्षित है, या उससे भी बुरा, यदि वे इन्हें अपने मन में ही दबाकर रखें—तो मुझे बहुत दुःख होगा। मैं चाहता हूँ कि मेरे बच्चे अपनी हर बात को मुझसे कहें, तब भी जब वे स्वयं पर संदेह करने से या उलझनों से जूझ रहे हों।

इसी प्रकार, परमेश्वर भी अपने बच्चों की बातें सुनना चाहता है। उसने अपने बच्चों को मोल लेकर, छुटकारा देने के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकायी है। अपने बच्चों के प्रति मेरा प्रेम, तथा आपके और मेरे प्रति परमेश्वर के प्रेम की तुलना में बहुत छोटा है। यदि मैं एक पापी पिता होकर भी अपने बच्चों के प्रश्न सुनकर आनन्दित होता हूँ, तो एक सिद्ध पिता होने के नाते परमेश्वर अपने बच्चों के प्रश्न सुनकर कितना अधिक आनन्दित होता होगा! जिस परमेश्वर ने अपने पुत्र को भी न रख छोड़ा (रो. 8:32), उसने अपने बच्चों के लिए अपने निकट आने का ऐसा मार्ग सुनिश्चित किया है जिसे कोई तोड़ नहीं सकता। उसने आपको छुटकारा इसलिए नहीं दिया कि दूर से आपको केवल सहन करता रहे; उसने आपको इसलिए छुटकारा दिया ताकि आप उसके निकट आ सकें—यहाँ तक कि तब भी, जब उसके "निकट" आने का अर्थ अपने संदेहों को भी साथ लेकर आना हो।

भजनकारों के समान अपने "कब तक को?" और अपने "ऐसा क्यों...?" जैसे प्रश्न परमेश्वर के सामने लाएँ। अपनी उलझनें और वे प्रश्न भी उसके पास लाएँ जिन्हें आप किसी और से पूछने में

संकोच या लज्जा महसूस करते हैं। परमेश्वर उन सब बातों को पहले से जानता है, फिर भी वह आपको अपने निकट आने के लिए कहता है।

अय्यूब

पवित्रशास्त्र में संदेह के साथ संघर्ष का सबसे स्पष्ट उदाहरण सम्भवतः अय्यूब की पुस्तक में दिखाई देता है, और इसलिए यह पुस्तक हमारे गम्भीर ध्यान के योग्य है। अय्यूब एक धर्मी जन था, परन्तु उसे बहुत भारी दुःख सहना पड़ा, क्योंकि शैतान का दावा था कि परमेश्वर के प्रति उसका प्रेम केवल उसके सुख-सुविधाओं का परिणाम है। शैतान का विश्वास था कि यदि परमेश्वर अय्यूब से अपनी आशीषें हटा ले, तो वह परमेश्वर को शाप देगा और उससे मुँह मोड़ लेगा। इसलिए परमेश्वर ने शैतान को अनुमति दी कि वह अय्यूब पर आक्रमण करे और उससे लगभग सब कुछ छीन ले।

अय्यूब अपनी धन-संपत्ति, सेवकों, बच्चों, पत्नी का सम्मान, अपना स्वास्थ्य, अपनी प्रतिष्ठा, अपनी वस्तुओं तथा मित्रों को, लगभग सब कुछ खो देता है। इन सब हानियों और दुःखों के बीच अय्यूब लगभग 29 अध्यायों तक परमेश्वर को पुकारता रहता है तथा अपनी उलझनों और संदेहों को खुलकर व्यक्त करता है। यह हमें दिखाता है कि स्वयं पर संदेह करना और विश्वास, ये दोनों एक साथ चल सकते हैं। पवित्रशास्त्र हमें यह भी सीखने में सहायता करता है कि परमेश्वर को सच्चाई से लगातार खोजते हुए, हम स्वयं पर संदेह करने वाली स्थिति का सामना कैसे करें।

तब अध्याय 38 में परमेश्वर अपनी चुप्पी तोड़ता है और अय्यूब को उत्तर देता है। “यह कौन है जो अज्ञानता की बातें कहकर युक्ति को बिगाड़ना चाहता है? पुरुष के समान अपनी कमर बाँध ले, क्योंकि मैं तुझ से प्रश्न करता हूँ, और तू मुझे उत्तर दे” (अय. 38:2-3)। तब परमेश्वर एक के बाद एक ऐसे प्रश्न पूछता है और ऐसी बातें कहता है कि अय्यूब के पास कोई उत्तर नहीं होता है।

जब आप अय. 38–41 में बवंडर के बीच से दिए गए परमेश्वर के उत्तर को पढ़ते हैं, तो पहली दृष्टि में ऐसा लग सकता है कि मानो परमेश्वर अय्यूब के लगातार प्रश्नों से खिन्न हो गया हो। परन्तु वास्तव में वह अय्यूब को उसकी मूर्खता के अनुरूप उत्तर दे रहा था (नीत. 26:4)। जैसे एक बुद्धिमान पिता अपने क्रोधित बच्चे की भावनात्मक प्रतिक्रिया को धीरज के साथ सुनता है, वैसे ही परमेश्वर प्रतीक्षा करता है और फिर कोमल संवेदनशीलता के साथ अटल सत्य को उसके सामने प्रकट करता है।

अध्याय 42 में एक आश्चर्यजनक मोड़ आता है: परमेश्वर घोषणा करता है कि वह अय्यूब से प्रसन्न है, परन्तु अय्यूब के मित्रों से क्रोधित है (वे मित्र जो परमेश्वर का पक्ष लेने का प्रयास कर रहे थे!) (अय. 42:7–8)। इस प्रकार सच्चाई से अपने संदेहों और प्रश्नों को परमेश्वर के सामने रखने वाले अय्यूब की सराहना की जाती है, जबकि परमेश्वर के घोषित रक्षकों की आलोचना की जाती है। ऐसा कैसे हो सकता है?

इस सम्बन्ध में टिम केलर की निम्न टिप्पणी विशेष रूप से सहायक है:

> वे प्रार्थनाएँ थीं। अय्यूब क्रोधित था और शिकायत भी कर रहा था, परन्तु वह अपना क्रोध और अपनी शिकायतें परमेश्वर के सामने व्यक्त कर रहा था। उसने कभी परमेश्वर से मुँह नहीं मोड़ा और न ही उसे छोड़कर गया।
>
> उसने कहा, "हे परमेश्वर, मैं तुझ को नहीं समझ पा रहा हूँ। मैं तुझ से क्रोधित हूँ।" परन्तु उसने कभी परमेश्वर से मुँह नहीं मोड़ा। जब उसे इससे कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं मिल रहा था, तब भी वह परमेश्वर के साथ बना रहा। यह दर्शाता है कि अन्ततः शैतान पराजित हो गया। यहाँ जो घटना घटित हो रही है, वह यह है कि यह व्यक्ति उस रीति से प्रार्थना नहीं कर रहा था जैसी आदर्श रूप से करनी चाहिए थी, फिर भी वह प्रार्थना कर रहा था। वह परमेश्वर से बातचीत कर रहा था और उसकी निकटता में बना हुआ था।

केलर की मुख्य बात यह है कि अय्यूब के संदेहों के बीच भी परमेश्वर उससे प्रसन्न था, क्योंकि वह अपने संदेहों और निराशाओं को बार-बार परमेश्वर के पास लेकर आता रहा। अपनी सारी उलझनों के बीच में भी अय्यूब जानता था कि वह अपने प्रश्न परमेश्वर के सामने रख सकता है, और उसने ऐसा किया भी! यह स्वयं पर संदेह करने से निपटने का तरीका सीखने का एक शक्तिशाली उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसका समाधान संदेहों को दबाने में नहीं, परन्तु उन्हें ईमानदारी से परमेश्वर को सौंप देने में है।

हाँ, अय्यूब को यह सीखने की आवश्यकता थी कि "परमेश्वर स्वर्ग में है; वह वही करता है जो उसे भाता है" (भज. 115:3)। और हाँ, परमेश्वर ने उसे यह बात अत्यन्त स्पष्ट रीति से समझाई थी। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि परमेश्वर अय्यूब से इसलिए खिन्न या क्रोधित था क्योंकि वह अपने संदेह उसके पास लेकर गया था। इसके विपरीत, वह अय्यूब से प्रसन्न था। जब हम यह विचार करते

हैं कि परमेश्वर संदेह के विषय में क्या कहता है, तब अय्यूब की कहानी हमें स्मरण दिलाती है कि परमेश्वर हमारी ईमानदारी का स्वागत करता है। वह हमें यह नहीं सिखाता कि संदेह को हटाकर ही विश्वास किया जा सकता है; वरन् वह हमें सिखाता है कि हम अपने संदेहों के बीच से होकर विश्वास की ओर आगे बढ़ें।

इस्राएल का जंगल में भटकना

इस्राएल के जंगल में भटकने के संदर्भ में, परमेश्वर वास्तव में उनके द्वारा लगातार उस पर किए गए संदेह के कारण क्रोधित दिखाई देता है। परन्तु यहाँ यह समझना हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि कम से कम दो बातें ध्यान देने योग्य हैं।

पहला, यह कि इस्राएल की प्रतिक्रिया अपने संदेह के प्रति अय्यूब से बिलकुल से भिन्न थी। जब इस्राएल ने परमेश्वर पर संदेह किया, तो उन्होंने विद्रोह के साथ व्यवहार किया। लेकिन जब अय्यूब ने संदेह किया, तो उसने अपने संदेहों को प्रार्थना में परमेश्वर के सामने रखा और फिर भी विश्वासयोग्य रीति से परमेश्वर का अनुसरण करता रहा। उसके पास प्रश्न थे, हाँ, लेकिन उसने परमेश्वर को नहीं छोड़ा। इसके विपरीत, इस्राएल ने कई बार परमेश्वर को त्याग दिया था। अय्यूब ने अपने संदेहों को परमेश्वर के सामने रखकर निरन्तर धार्मिकता का पीछा किया, इसके विपरीत इस्राएली अपने संदेह से चिपके रहे और परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करने का चुनाव किया। हाँ, दोनों ने संदेह किया, परन्तु उनके संदेह की प्रतिक्रिया एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न थी।

फिर भी, परमेश्वर ने इस्राएल को कभी नहीं छोड़ा। हाँ, उनके संदेह के कारण उन्हें दुखद परिणामों का सामना करना पड़ा। हाँ, उनके संदेह ने परमेश्वर के साथ उनकी संगति में बाधा डाली—जब हम संदेह करते हैं तो हमारे साथ भी ठीक ऐसा ही होता है। परन्तु परमेश्वर ने कभी उनसे मुँह नहीं मोड़ा। वह लगातार उन पर अपनी दया दिखाता रहा। यह हमें दिखाता है कि पवित्रशास्त्र हमें यह नहीं सिखाता कि हम स्वयं पर संदेह करने को अनदेखा कर दें।, परन्तु यह सिखाता है कि हम बार-बार परमेश्वर की दया की ओर लौटें।

दूसरा, नई वाचा और पुरानी वाचा के बीच के अन्तर को समझना हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

पुरानी वाचा में, परमेश्वर की प्रजा व्यवस्था के अधीन थी, जो अपने स्वभाव के अनुसार उनके आज्ञा-उल्लंघन को उजागर करती थी। आप देखेंगे कि पुरानी वाचा छुटकारे के इतिहास के उस काल का

प्रतिनिधित्व करती है, जब परमेश्वर की व्यवस्था इस्राएल पर प्रभुत्व के साथ लागू थी, जिससे उन्हें अपनी असफलता के कारण अनुग्रह की आवश्यकता को स्वीकार करना पड़ता था—क्योंकि वे व्यवस्था का पूर्ण रूप से पालन नहीं कर सकते थे। वास्तव में, इस्राएल के सारे पापों को ढकने के लिए पर्याप्त बैल और बकरे नहीं थे। इस्राएल अपनी स्वयं की सामर्थ्य से परमेश्वर की धार्मिकता की अपेक्षाओं के स्तर तक नहीं पहुँच सकता था।

आपको यहाँ यह सोचना चाहिए: "तो क्या मैं भी ऐसा नहीं कर सकता!" और आप सही होंगे। हममें से कोई भी ऐसा नहीं कर सकता। हम सभी इस्राएलियों के समान हैं, जो परमेश्वर की व्यवस्था को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसलिए हमें नई वाचा की आवश्यकता है, जिसमें विश्वासी मसीह और उसकी सिद्धता के साथ एकता में होते हैं। इसका अर्थ यह है कि जब परमेश्वर हमें देखता है, तो वह हमारे संदेह को नहीं देखता; वह मसीह की सिद्धता को देखता है—उसको, जिसने कभी संदेह नहीं किया। यीशु के साथ एकता में होना यह दर्शाता है कि हमारी हर असफलता—जिसमें हमारा संदेह भी सम्मिलित है—(1) हमारे स्थान पर उसकी क्रूस की मृत्यु के द्वारा पूरी कीमत चुका दी गई है; और (2) उसकी सिद्ध धार्मिकता से बदल दी गई है (2 कुर. 5:21)। उसने हमारे मैले और पापमय वस्त्रों को लेकर हमें अपनी धार्मिकता के वस्त्र पहना दिए हैं।

इसलिए हमें परमेश्वर से वह दण्ड नहीं मिलता जिस के लिए हम अपने संदेह के कारण योग्य हैं। क्यों? क्योंकि हम मसीह के साथ एकता में हैं, जिसने हमारे स्थान पर हमारे लिए दण्ड सहा। परमेश्वर हमें अविश्वासी संदेह करने वालों के रूप में नहीं देखता। वह हमें वैसे देखता है जैसे वह अपने पुत्र को देखता है: एक प्रिय पुत्र के रूप में, जिसने कभी कोई गलत काम नहीं किया। वह मसीह के द्वारा हमें पहनाए गए धार्मिकता के वस्त्रों को देखता है और हमसे प्रसन्न होता है।

इस कारण हम अपने संदेहों को परमेश्वर के सामने यह भरोसा रखते हुए ला सकते हैं, कि हमारे संदेह जिस क्रोध या खिन्नता के योग्य हैं, वह सब पहले ही मसीह ने अपने ऊपर ले लिया है। जो विश्वासी स्वयं पर संदेह करने से संघर्ष कर रहे हैं, उन्हें यह अनुभव बहुत बड़ी स्वतंत्रता देता है: आत्मविश्वास प्रश्नों को दबाने से नहीं बढ़ता, परन्तु इस समझ से बढ़ता है कि मसीह ने उस बोझ को पहले ही उठा लिया है।

इसलिए अब जो मसीह यीशु में हैं, उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं (रो. 8:1)।

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

सुसमाचार

अपनी सांसारिक सेवकाई के दौरान, यीशु ने निरन्तर विश्वास की सराहना की।

मत्ती 9:22

यीशु ने मुड़कर उसे देखा और कहा, "पुत्री धैर्य रख; तेरे विश्वास ने तुझे चंगा किया है।" अतः वह स्त्री उसी समय चंगी हो गई।

मत्ती 21:21

"मैं तुम से सच कहता हूँ; यदि तुम विश्वास रखो, और सन्देह न करो; तो न केवल यह करोगे, जो इस अंजीर के पेड़ से किया गया है; परन्तु यदि इस पहाड़ से भी कहोगे, कि उखड़ जा, और समुद्र में जा पड़, तो यह हो जाएगा।"

मरकुस 2:5

यीशु ने, उनका विश्वास देखकर, उस लकवे के मारे हुए से कहा, "हे पुत्र, तेरे पाप क्षमा हुए।"

मरकुस 11:22

यीशु ने उसको उत्तर दिया, "परमेश्वर पर विश्वास रखो।

लूका 7:9

यह सुनकर यीशु ने अचम्भा किया, और उसने मुँह फेरकर उस भीड़ से जो उसके पीछे आ रही थी कहा, "मैं तुम से कहता हूँ, कि मैंने इस्राएल में भी ऐसा विश्वास नहीं पाया।"

लूका 17:19

तब उसने उससे कहा, "उठकर चला जा; तेरे विश्वास ने तुझे चंगा किया है।"

ये अंश उन अवसरों का एक छोटा सा नमूना हैं जब यीशु ने विश्वास के विषय में सकारात्मक रूप से बात की। लेकिन यह सोचना सुसमाचारों का गलत चित्रण होगा कि उसने कभी संदेह का सामना नहीं किया। सुसमाचार हमें सिखाते हैं कि यद्यपि मसीह के प्रति उचित प्रतिक्रिया विश्वास है, फिर भी संदेह एक वास्तविकता है।

विचार करने के लिए पहला उदाहरण उसके प्रमुख शिष्य पतरस के साथ का है। मत्ती 14 में यीशु पानी पर चल रहा है। स्वाभाविक रूप से, चेले यह देखकर चकित हैं कि उनका गुरु लहरों पर चल रहा है और डूब नहीं रहा है! घटनाओं की एक अद्भुत श्रृंखला में, यीशु अपने चेलों के साथ नाव में चढ़ने के बजाय पतरस को नाव से बाहर निकलकर अपने साथ पानी पर आने के लिए कहता है। पतरस सहमत होता है, नाव से बाहर कदम रखता है, और यीशु की ओर चलने लगता है!

क्या आप कल्पना कर सकते हैं?

परन्तु फिर, जब वह अपने चारों ओर के खतरे को देखता है, तो भय और संदेह उठ खड़े होते हैं, जिसके कारण वह डूबने लगता है। जब वह डूबने लगता है, तो वह यीशु को पुकारता है, "हे प्रभु, मुझे बचा!" (मत. 14:30)। यीशु उसे पकड़ लेता है और उससे कहता है, *"हे अल्प-विश्वासी, तूने संदेह क्यों किया?"* (मत. 14:31ब)।

यहाँ हम देखते हैं कि पतरस, जो यीशु के निकटतम शिष्यों में से एक था और जिसने उसे अद्भुत चमत्कार करते देखा था, स्वयं यीशु पर संदेह करता है। हमें फिर से यह स्मरण कराया जाता है कि परमेश्वर के मार्ग हमारे मार्गों से भिन्न हैं! यदि उसके स्थान पर मैं होता, तो शायद मैं पतरस को पानी में गिरने देता। और कहता "देखा, मुझ पर संदेह करने का परिणाम यही होता है, पतरस! अब तैरकर नाव तक वापस आ। दूसरा कौन प्रयास करना चाहता है?" सौभाग्य से, परमेश्वर के मार्ग हमारे मार्गों जैसे नहीं हैं। इसके विपरीत, ध्यान दीजिए कि जैसे ही पतरस सहायता के लिए पुकारता है, यीशु क्या करता है: *"यीशु ने तुरन्त अपना हाथ बढ़ाकर उसे थाम लिया"* (मत. 14:31अ)।

अपनी अच्छी मंशा के बावजूद भी पतरस के मन में संदेह आ गया। उन संदेहों को अपने भीतर रखने के बजाय, उसने यीशु को पुकारा और तब उसे वह सहायता मिली जिसकी उसे आवश्यकता थी।

मरकुस 9 में हम इसी प्रकार का एक उदाहरण देखते हैं। इस बार यह संघर्ष बारह शिष्यों में से किसी एक का नहीं, परन्तु एक ऐसे व्यक्ति का है जिसका पुत्र दुष्टात्मा से ग्रस्त था। अविश्वास के कारण कोई भी उस लड़के को चंगा नहीं कर सका (मर. 9:18–19)। तब उस पिता ने यीशु से विनती की, यीशु ने उत्तर दिया, *"विश्वास करनेवाले के लिये सब कुछ हो सकता है।"* (मर. 9:23)। पूरी सच्चाई के साथ एक ही क्षण में उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, *"मैं विश्वास करता हूँ; मेरे अविश्वास का उपाय कर!"* (मरकुस 9:24)।

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

पतरस के समान, मरकुस 9 में वह पिता भी संदेह से जूझ रहा है। लेकिन इन दोनों के बीच केवल यही समानता नहीं है। पतरस के समान ही, उस पिता ने अपने संदेह को दबाने के बजाय उसे स्वीकार किया और सहायता के लिए यीशु को पुकारा।

प्रत्येक स्थिति में, संदेह करने वाले व्यक्ति ने अपना संदेह यीशु के सामने स्वीकार किया और उससे सहायता माँगी। यही सबसे महत्वपूर्ण बात है। पहला कदम: स्वीकार करना। दूसरा कदम: विनती करना। परमेश्वर एक अनुग्रहकारी पिता है, जो उन्हें सहायता करने से आनन्दित होता है अर्थात् उनकी जो उसे पुकारते हैं। एक अच्छे पिता के समान वह अपने बच्चों को संघर्ष करते हुए देखकर प्रसन्न नहीं होता है। सुसमाचारों में हम परमेश्वर के हृदय को प्रकट होते हुए देखते हैं, जो संदेह करने वालों के प्रति करुणा दिखाता है और निरन्तर उन लोगों की सहायता करता है जो उससे सहायता माँगते हैं।

यदि मसीह के स्वर्गारोहण के साथ ही सारी अनिश्चितताएँ दूर हो गई होतीं, तो कितना अच्छा होता। दुर्भाग्य से, उसके पुनरुत्थान और उसके चले जाने के बाद भी परमेश्वर के अनेक लोग संदेह से जूझते रहे।

पत्रियाँ

नए नियम का सावधानी के साथ अध्ययन करने पर पता चलता है कि इक्कीस पत्रियों में से अठारह में संदेह का वर्णन किया गया है, चाहे वह अप्रत्यक्ष रूप से हो या प्रत्यक्ष रूप से। इनमें से दो पत्रियाँ यीशु के सौतेले भाइयों (याकूब और यहूदा) के द्वारा लिखी गई थीं, जिनके विषय में हम जानते हैं कि उन्हें अपने ही भाई पर संदेह किया (यूहन्ना 7:5)!

यह छोटी सी यहूदा की पुस्तक हमारे विषय के लिए बहुत अधिक सहायक है। यहूदा, जो कभी संदेह करने वाला था और जिसने यीशु के दावों को अस्वीकार किया था, अब विश्वासियों को उन झूठे शिक्षकों के विषय में गंभीरता से चेतावनी देता है जो लोगों के मन में संदेह उत्पन्न कर रहे थे।

अपने पत्र के अन्त में यहूदा अपने पाठकों को यह निर्देश देता है: *"जो संदेह करते हैं उन पर दया करो"* (यहूदा 22)। संभवतः यहूदा को वे दिन स्मरण रहे होंगे जब उसने अपने ही भाई के दावों पर संदेह किया था, और उसे यह भी स्मरण रहा होगा कि उसके अपने भाई ने उसके प्रति कैसी दया दिखाई थी। यीशु ने उसके प्रति क्रोध नहीं, वरन् धैर्य दिखाया, और बार-बार तरस खाया, तथा अंततः उसे सत्य को समझने में सहायता की।

इसलिए अब, जब यहूदा अपने पत्र का समापन करता है, तो वह जानता है कि उसके पाठकों का सामना ऐसे लोगों से होगा जो झूठे शिक्षकों के प्रभाव में आ रहे हैं। वह यह भी जानता है कि उन्हें उन लोगों से भी सामना करना पड़ेगा जो संदेह से जूझ रहे हैं।

और उसकी उनके लिए क्या सलाह है?

उन पर दया करो।

क्यों?

क्योंकि वह जानता है कि यीशु ने उसके साथ भी ऐसा ही किया था। उसने अपने व्यक्तिगत अनुभव से सीखा कि संदेह करने वाले के प्रति यीशु का हृदय दया, धैर्य, तरस और प्रेम से भरा हुआ है।

जंगल में इस्राएल के संदेह से लेकर, अपने कष्टों में भजनकारों के संदेह तक, त्रासदी की लहरों में अय्यूब के संदेह तक, और सुसमाचारों में पाए जाने वाले संदेह तक, तथा पत्रियों में मिलने वाले संदेह तक, संदेह के प्रति परमेश्वर की प्रतिक्रिया निरन्तर दयालु ही रही है।

यहोवा, परमेश्वर दयालु और अनुग्रहकारी, कोप करने में धीरजवन्त, और अति करुणामय और सत्य है (निर्ग. 34:6)।

मैं नम्र और मन में दीन हूँ (मत.11:29)।

जो कोई उसके पास आता है, उसे वह कभी नहीं ठुकराएगा, यहाँ तक कि वह भी जो संदेह से जूझ रहा हो (यूह. 6:37)।

मित्रों, अपने संदेहों को साहस के साथ परमेश्वर के पास ले जाएँ (इब्र. 4:16), यह जानते हुए कि वह आपसे चिढ़ता या नाराज़ नहीं होता। उसके पुत्र के साथ आपकी एकता ने आपके लिए उसका ध्यान से सुनने वाला कान और उसकी पिता समान स्नेहपूर्ण करुणा सुनिश्चित कर दी है।

अब आइए देखें कि संदेह को आत्मविश्वास में कैसे बदला जा सकता है।

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

चिन्तन के लिए प्रश्नः

1. परमेश्वर हमारे संदेहों में हमारे प्रति क्यों दयालु बना रहता है?
2. यदि हम जानते हैं कि परमेश्वर दयालु है, तो भी हम कभी-कभी अपने संदेहों में सहायता पाने के लिए उसके पास जाने में धीमे क्यों पड़ जाते हैं?
3. पवित्रशास्त्र में ऊपर दिए गए उदाहरणों के समान, आपके लिए अपने संदेहों को परमेश्वर के हाथों में सौंपना व्यवहारिक रूप से कैसा दिखाई देगा? इन विषयों पर अपने मार्गदर्शक के साथ चर्चा कीजिए।

3

संदेह को विश्वास में बदलना

भाग एक में, हमने संदेह की परिभाषा समझी और संदेह के उन विभिन्न प्रकारों की पहचान की जिनका हम सामना करते हैं (अर्थात् बौद्धिक, भावनात्मक और जानबूझकर किया जाने वाला संदेह)।

भाग दो में, हमने संपूर्ण पवित्रशास्त्र में संदेह से सम्बंधित बाइबल आधारित उदाहरणों पर विचार किया, और उन लोगों के प्रति परमेश्वर के हृदय की जाँच की जो संदेह करते हैं।

भाग तीन में, हम इस बात पर विचार करेंगे कि जब कठिन समय आता है और संदेह होने लगता है, तब हमें क्या करना चाहिए, तथा संदेह को दृढ़ विश्वास में कैसे बदला जा सकता है। कई विश्वासियों के लिए स्वयं पर संदेह करना और उलझन अत्यधिक बोझिल प्रतीत हो सकते हैं, विशेषकर तब जब कोई कहता है, कि "मैं परमेश्वर पर विश्वास करना चाहता हूँ, लेकिन मेरे मन में संदेह हैं।" पवित्रशास्त्र हमें फिर से भरोसा देता है कि इस संघर्ष में हम अकेले नहीं हैं, और यह भी कि विश्वास के और अधिक दृढ़ होने से पहले, संदेह और विश्वास प्रायः साथ-साथ चलते हैं।

मेरी कहानी

जब मैं छोटा था, शायद सात या आठ वर्ष का था। तब मैंने विश्वास की घोषणा की थी। लेकिन ऐसी गवाही रखने वाले बहुत से लोगों के समान मैं अपने विश्वास के प्रति वास्तव में गंभीर नहीं था, जब तक कि मैं हाई स्कूल और कॉलेज के वर्षों में नहीं पहुँच गया।

वह समय मेरे जीवन में एक निर्णायक मोड़ था। परमेश्वर ने मुझे वर्षों से हृदय में बसी मूर्तियों के समान झूठे सहारों से मन फिराने के लिए अगुवाई की। उसने स्थानीय कलीसिया के प्रति मेरा प्रेम बढ़ाया,

स्वयं पर संदेह करना कठिन समय में इस पर कैसे विजय पाएँ और विश्वास को कैसे दृढ़ करें

मेरे भीतर सेवा पाने की अपेक्षा सेवा करने की अधिक लालसा उत्पन्न की, मेरी पत्नी (डेनिएल) और मैंने एक-दूसरे को जानना और विवाह की दिशा में आगे बढ़ना आरम्भ किया, और मैं आत्मिक रूप से बढ़ रहा था। और बहुत सी अद्भुत घटनाएँ घट रही थीं, तथा जीवन अच्छा चल रहा था! लेकिन शीघ्र ही परिस्थितियाँ बदलने वाली थीं।

जब मैं कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने और विवाह करने के निकट पहुँच रहा था, तब एक के बाद एक परीक्षाएँ आने लगीं। बहुत बड़ी आर्थिक मंदी के कारण मेरे पिता का व्यवसाय बन्द हो गया। व्यवसाय के बन्द होने से हमारे परिवार को दिवालिया होने का सामना करना पड़ा। दिवालिया होने के कारण हमारा घर और वाहन भी चले गए। आर्थिक दबाव इतना बढ़ गया कि मेरे माता-पिता एक-दूसरे से अलग हो गए। इन्हीं सब परिस्थितियों के बीच मेरे पिता बीमार पड़ गए, लेकिन स्वाभाविक रूप जीवन की अन्य उलझनों से निपटने में इतने व्यस्त थे कि चिकित्सक के पास नहीं जा सके। और जब वे अन्त में जाँच कराने गए, तब तक कैंसर तीसरे चरण में पहुँच चुका था। इसी दौरान डेनिएल के एक भाई का भी निधन हो गया। अंततः जब मेरे पिताजी का कैंसर चौथे चरण में पहुँच गया, तो उन्होंने चौबीसों घंटे देखभाल के लिए डेनिएल और मेरे (जो उस समय नवविवाहित थे) साथ रहने के लिए सहमति दे दी। कुछ ही समय बाद, उन्होंने मेरा हाथ थामे हुए हमारे ही घर में अन्तिम साँस ली।

मेरा जीवन, जो निरन्तर आशा और उत्साह की ओर आगे बढ़ रहा था, शोक की लगातार आती लहरों ने बुरी तरह झकझोर दिया।

अब मैं समझ गया था कि 'समुद्र की लहरों के समान उमड़ते हुए शोक' कैसा अनुभव कराते हैं।

उस दुःख भरे समय में मैंने परमेश्वर से हस्तक्षेप करने के लिए विनती की। मैंने उससे बार-बार मध्यस्थता की प्रार्थना की कि वह सब कुछ ठीक कर दे। जो टूट चुका था उसे जोड़ दे, जो बिगड़ गया है उसे सुधार दे। मैं जानता था कि परमेश्वर का सर्वोच्च उद्देश्य अपनी ही महिमा है (यशा. 48:9–11)। परन्तु मैं यह नहीं समझ पा रहा था कि वह मेरे पिता को चंगा क्यों नहीं कर रहा है, मेरे माता-पिता के वैवाहिक जीवन को क्यों नहीं सँवार रहा है, हमारे परिवार की आर्थिक आवश्यकताओं को क्यों पूरा नहीं कर रहा है, या डेनिएल के भाई को क्यों नहीं चंगा कर रहा है। मेरे पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं था।

फिर भी, उस पीड़ा और अनुत्तरित प्रश्नों के बीच, प्रभु ने आश्चर्यजनक रीति से उस समय का उपयोग मेरे विश्वास को दृढ़ करने के लिए किया। कैसे? उसने मुझे उन्हीं चार बातों से होकर जाने दिया जिनसे संदेह का सामना करने वाले किसी भी व्यक्ति को होकर जाना पड़ता है। शोक, अनिश्चितता या संदेह के भय का सामना कर रहे विश्वासियों के लिए ये चार कदम अत्यन्त व्यावहारिक सिद्ध होते हैं। संदेह से जुड़े बाइबल के उदाहरण हमें सिखाते हैं कि परमेश्वर हमारी दुर्बलता के बीच भी हमारी सच्ची और खुली बातों का स्वागत करता है।

1. इसे परमेश्वर के पास ले जाएँ

जब प्रश्न उठने लगें और अनिश्चितता मन में घर करने लगे, तो इसे इस बात का संकेत समझिए कि आपको परमेश्वर से बात करने की आवश्यकता है। कुछ समय तक आप इसे अपने भीतर ही दबाए रखने के लिए प्रलोभित होंगे। शत्रु आपको यह विश्वास दिलाने का प्रयास करेगा कि यह बात इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है कि अभी इसे परमेश्वर के सामने रखा जाए। उस आवाज़ को मत सुनिए। जैसे ही आप अपने संदेहों को पहचानें, उन्हें तुरन्त ही परमेश्वर के पास ले जाइए। जब आपको लगे कि स्वयं पर संदेह करना, धीरे-धीरे मन में प्रवेश कर रहा है, या जब आप कहें, कि "मैं परमेश्वर पर विश्वास करना चाहता हूँ, परन्तु मेरे मन में संदेह हैं," तब प्रार्थना प्रायः पहला और सबसे अधिक चंगाई देने वाला उत्तर होता है।

चार्ल्स स्पर्जन, जिन्हें अधिकाँश "उपदेशकों का राजकुमार" कहा जाता था, कभी -कभी अपने ही संदेहों से संघर्ष करते थे। फिर भी वह जानते थे कि शैतान के आरोपों और दोषारोपण के बावजूद भी मसीह के पास जाना कितना आवश्यक है:

> *"मुझे प्रतिदिन एक पापी के रूप में मसीह के पास जाना उचित लगता है, जैसा मैं आरम्भ में आया था। शैतान कहता है, कि 'तुम कोई संत नहीं हो।' ठीक है, यदि मैं संत नहीं हूँ, तो मैं एक पापी हूँ, और यीशु मसीह संसार में पापियों का ही उद्धार करने के लिए आया था। मैं चाहे डूबूँ या तैरूँ, मैं फिर भी उसी के पास जाता हूँ—क्योंकि मेरी आशा किसी और में नहीं है।"*

आप सोच सकते हैं कि आपके संदेह आपको पापी ठहराते हैं—और सम्भव है कि ऐसा हो भी सकता है। परन्तु मसीह संसार में पापियों का उद्धार करने के लिए आया। इसलिए यदि आप अपने संदेहों को उसके पास ले जाते हैं, तो आपको किसी बात का भय नहीं होना चाहिए। जब संदेहों को छिपाने के बजाय ईमानदारी से परमेश्वर की उपस्थिति में लाया जाता है, तब विश्वास और संदेह के प्रति सही समझ साथ-साथ बढती चली जाती है, और विश्वास अधिक दृढ़ होता चला जाता है।

2. खुलकर और ईमानदारी से बात करें

परमेश्वर के सामने पूरी ईमानदारी और खुलापन रखिए। जब आप अपने संदेह उसके पास ले जाएँ, तो कुछ भी छिपाइए मत। अपने मन की बात बिना झिझक और बिना घुमा फिराकर के कहिए। स्वाभाविक रूप से आपको यह चिन्ता हो सकती है कि कहीं आप परमेश्वर के प्रति अनादर या अपमानजनक तो नहीं बन रहे हैं। परन्तु यदि भजनकार इतनी स्पष्टता के साथ यह प्रार्थना कर सकता है कि परमेश्वर उसके शत्रुओं के दाँत तोड़ दे (भज. 58), तो आप भी अपने संदेहों के विषय में परमेश्वर से खुलकर बात कर सकते हैं। परमेश्वर इसे सुनने और संभालने में पूर्ण रीति से योग्य है।

परमेश्वर के लोगों के साथ भी खुलकर और ईमानदारी से बात कीजिए। विश्वासियों को एक -दूसरे के भार उठाने की आज्ञा दी गई है (गल. 6:2)। यह तब तक सम्भव नहीं है जब तक हम उन बातों के विषय में एक-दूसरे के साथ सच्चाई से बात न करें जो हमें बोझिल कर रही हैं। यदि आप पहले से ही किसी कलीसिया का हिस्सा नहीं हैं, तो ऐसी स्वस्थ कलीसिया से जुड़िए जहाँ आपको प्रत्येक सप्ताह सुसमाचार से आशा सुनने को मिले, और जहाँ पापों तथा संघर्षों को स्वीकार करना एक स्वाभाविक और सामान्य बात होती है। अधिकतर आप पाएँगे कि आपके आसपास के अन्य लोग भी उन्हीं संघर्षों से होकर गए हैं जिनका आप सामना कर रहे हैं, और वे आपको बता सकते हैं कि उनके लिए क्या सहायक सिद्ध हुआ था।

कुरिन्थुस की कलीसिया को लिखते समय पौलुस इसी बात की ओर संकेत कर रहा था:

> *हमारे प्रभु यीशु मसीह के परमेश्वर, और पिता का धन्यवाद हो, जो दया का पिता, और सब प्रकार की शान्ति का परमेश्वर है। वह हमारे सब क्लेशों में शान्ति देता है; ताकि हम उस शान्ति के कारण जो परमेश्वर हमें देता है, उन्हें भी शान्ति दे सके, जो किसी प्रकार के क्लेश में हों।* (2 कुर. 1:3-4)

जब आप संदेह से पीड़ित हों, तो अपने संदेह के विषय में अन्य मसीहियों के साथ इसे खुलकर साझा करें। संभव है कि उन्होंने भी ऐसी ही परिस्थिति का सामना किया हो, और परमेश्वर ने उन्हें ऐसे उत्तर दिए हों जो आपके लिए भी सहायक सिद्ध हो जाएँ। उनकी गवाहियाँ संदेह के विषय में व्यावहारिक उदाहरण बन जाती हैं, जो यह दिखाती हैं कि विश्वासी संघर्षों से बचकर नहीं, वरन् उन्हीं संघर्षों के माध्यम से बढ़ते चले जाते हैं।

3. सहायता माँगें

सहायता माँगें। जब पतरस डूबने लगा था, तब उसने जिस प्रकार सहायता के लिए पुकारा; मरकुस अध्याय 9 के उस पिता ने जिस प्रकार विनती की; और भजनकारों ने जिस प्रकार परमेश्वर को पुकारा—उसी प्रकार साहस के साथ परमेश्वर से उसकी अनुग्रहपूर्ण सहायता माँगिए। उसकी सहायता माँगकर आप परमेश्वर को किसी प्रकार का कष्ट नहीं दे रहे हैं। वास्तव में, त्रिएक परमेश्वर का तीसरा व्यक्तित्व, पवित्र आत्मा, हमारा "सहायक" कहलाता है (यूह. 14:26)!

जब परमेश्वर अपने लोगों को शान्ति देना चाहता है, तब वह उनसे कहता है , "*मत डर, क्योंकि मैं तेरे संग हूँ, इधर-उधर मत ताक, क्योंकि मैं तेरा परमेश्वर हूँ; मैं तुझे दृढ़ करूँगा और* ***तेरी सहायता करूँगा,*** *अपने धर्ममय दाहिने हाथ से मैं तुझे सम्भाले रहूँगा।*" (यशा. 41:10)।

उससे सहायता माँगें

परमेश्वर अपने लोगों को मुख्य रूप से अपने वचन के द्वारा सहायता प्रदान करता है। उसके वचन की ओर लौट आइए। बार-बार उसी की ओर लौटते रहिए। स्मरण रखिए कि वह कौन है। पवित्रशास्त्र की गहराइयों में उतरिए। समझ की खोज ऐसे कीजिए जैसे कोई छिपे हुए धन की खोज करता है (नीत. 2:4)।

परमेश्वर के लोगों से सहायता माँगें। खुलापन बनाए रखना महत्वपूर्ण है, परन्तु आपको अगला कदम भी उठाना चाहिए और सहायता माँगनी चाहिए। किसी से संपर्क करके यह कहना बिल्कुल उचित है, कि "मैं इस समय वास्तव में ____________ पर विश्वास करने के लिए संघर्ष कर रहा हूँ। क्या आपको इस विषय में कोई अनुभव है? या आपके पास ऐसा कोई साधन है जिससे मुझे सहायता मिल सके? अथवा क्या हम मिलकर इस विषय पर बातचीत कर सकते हैं?"

जब आप मसीही बने, तब आपको मसीह की देह में सम्मिलित कर लिया गया था। यह देह मसीह को प्रकट करने और उसके अन्य अंगों की सहायता करने के लिए ही अस्तित्व में है। पौलुस ने कुरिन्थुस की कलीसिया से कहा, "*इसलिए यदि एक अंग दुःख पाता है, तो सब अंग उसके साथ दुःख पाते हैं; और यदि एक अंग की बड़ाई होती है, तो उसके साथ सब अंग आनन्द मनाते हैं*" (1 कुर.12:26)। जब किसी अंग को आवश्यकता होती है, तो उसकी सहायता करना देह के अन्य अंगों के लिए एक स्वाभाविक बात है। इसलिए किसी स्वस्थ, सुसमाचार आधारित कलीसिया का सदस्य होना कितना महत्वपूर्ण है, इसे बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहा जा सकता।

जब आप संदेह से संघर्ष कर रहे होते हैं, तब आपको ऐसे लोगों के बीच रहना चाहिए जो आपको सत्य की ओर ले जा सकें। आपको परमेश्वर के वचन का विश्वासयोग्य प्रचार सुनने की आवश्यकता

है; आपको ऐसे गीत गाने चाहिए जो उस सत्य को प्रकट करते हों जिसे परमेश्वर सत्य कहता है; आपको अपने आसपास के विश्वासियों की उस समय प्रार्थनाएँ सुननी चाहिए, जब वे अपने पापों का अंगीकार करते हैं और परमेश्वर से सहायता माँगते हैं; और आपको बार-बार उस आश्वासन का स्मरण करना चाहिए जो मसीह में उन सभी के लिए उपलब्ध है जो सहायता के लिए उसके निकट आते हैं।

4. भरोसा

हो सकता है कि आपको उतनी शीघ्रता से उत्तर न मिलें जितनी आप अपेक्षा करते हैं। जब थोमा ने यीशु के पुनरुत्थान पर संदेह किया, तब यीशु ने उस पर दया की। परन्तु एक लेखक ने इस प्रकार लिखा है:

> *यीशु ने दया दिखाते हुए तुरन्त उत्तर नहीं दिया —उसने थोमा को आठ लम्बे, दुःखद, और अकेले तथा सम्भवतः भय से भरे हुए दिनों तक उसके अविश्वास के साथ रहने दिया। फिर, जब उचित समय आया, यीशु उसके सामने प्रकट हुआ और कहा, "अविश्वासी नहीं, परन्तु विश्वासी बन" (यूह. 20:27)। जब किसी कारणवश हम अपनी बुद्धि को परमेश्वर की बुद्धि से ऊपर रखने लगते हैं और उसके कारण संदेह हम पर आक्रमण करते हैं, तब वह भली-भाँति जानता है कि उन संदेहों से कब और कितने समय तक चुप रहकर निपटना है (1 कुर. 1:25)।*

जब आपको उत्तर न मालूम हों, तब भी परमेश्वर पर भरोसा रखें। विश्वास करें कि वह ऐसे तरीकों से कार्य कर रहा है जिन्हें आप अभी समझ नहीं पा रहे हैं। उसके सामने स्वयं को दीन और नम्र करें, और जब संदेह सिर उठाए, तो इस सत्य को दृढ़ता से थामे रखें: क्योंकि उस संदेह का एक उत्तर अवश्य है।

मैं गुरुत्वाकर्षण को गणितीय रूप से तो सिद्ध नहीं कर सकता, फिर भी हर सुबह यह भरोसा करके बाहर निकलता हूँ कि मैं अंतरिक्ष में नहीं उड़ूँगा। संदेह के विषय में भी यही बात लागू होती है। उत्तर कभी-कभी पहुँच से बाहर और पकड़ में न आने वाले प्रतीत हो सकते हैं, परन्तु परमेश्वर का वचन विश्वासयोग्य है। पवित्रशास्त्र पर दृढ़ता से खड़े रहें और विश्वास रखें कि परमेश्वर आपको थामे रहेगा।

निष्कर्ष

आपको और मुझे हर बात का उत्तर जानने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में, महिमा की उस अवस्था तक पहुँचने से पहले हमें कभी भी सभी बातों के उत्तर नहीं मिलेंगे। परन्तु जब आपके प्रश्न आपको बोझिल और बहुत परेशान करने लगें, तब स्मरण रखें कि आप उन्हें परमेश्वर के पास ले जा सकते हैं। संदेह करने वालों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया दयालु होती है। उसके सामने और उसके लोगों के सामने खुलेपन से सामने आएँ। और उस पर भरोसा रखें, भले ही आपके प्रश्नों के उत्तर उतनी शीघ्रता से न मिल रहे हों जितनी आप अपेक्षा करते हैं।

जैसा कि चार्ल्स स्पर्जन ने बहुत सुन्दर शब्दों में कहा है कि, *"अधिकाँश संदेह हम पर प्रभावी हो जाते हैं। कितनी बड़ी दया है कि आपका उद्धार इस बात पर निर्भर नहीं है कि आप मसीह को कितनी दृढ़ता से थामे हुए हैं, वरन् इस बात पर निर्भर है कि मसीह आपको कितनी दृढ़ता से थामे हुए है! कितना मधुर सत्य है कि उद्धार इस पर निर्भर नहीं करता कि आप उसका हाथ कितनी दृढ़ता से थामे हुए हैं, वरन् इस पर कि वह आपका हाथ कितनी दृढ़ता से थामे हुए है।"*

जब आप अपने संदेहों को परमेश्वर के सामने लाते हैं, तब यह स्मरण रखें कि आपका उद्धार आपके विश्वास की सामर्थ्य में नहीं है। आपका उद्धार करने वाला वह है जिस पर आपका विश्वास टिका हुआ है—और वह केवल मसीह है।

आपकी पकड़ डगमगा सकती है, पर मसीह की पकड़ कभी नहीं डगमगाती। क्रूस पर चढ़ने, फिर से जी उठने और राज्य करने वाले राजा ने क्रूस को दृढ़ता से थामा, ताकि आपके विश्वास की सबसे दुर्बल फुसफुसाहट भी उसके द्वारा पूरे किए गए कार्य से जुड़ी रहे। अपने संदेहों को उसके सामने खुलकर

और ईमानदारी से रखें। उससे अपने अविश्वास में सहायता माँगें। विश्वास रखें कि वह आपको स्वीकार करता है, अपने वचन के द्वारा आपकी सहायता करेगा, और संदेह की जटिल परिस्थितियों में भी आपको थामे रहेगा।

THE MENTORING PROJECT

रॉब केन ओहायो के वेस्टर्विल में स्थित सिटिज़न्स चर्च के पास्टर हैं। उनका विवाह डेनिएल से हुआ है, और उनके तीन बच्चे हैं: फिनले, लेनन और एज़्रा।